शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X
Vol. X, No.II, pp (591-596 April - June 2019

भारतीय दर्शन एवम मानव कल्याण : एक अवलोकन

डॉ आदित्य कुमार गुप्त
सहायक प्रोफेसर, दर्शन शास्त्र विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
Email: adityagitam@yahoo.com

सारांश

भारत के जीवन का दर्शन मूलतः विश्व कल्याण का दर्शन है। यहां की विश्व दृष्टि (World & view) संकीर्ण अर्थों में मानव केंद्रित (Anthropocentric) न होकर मनुष्य को उसके संपूर्ण परिवेश, जिसमें जीव जंतु, वृक्ष–पादप, भूमि–जल–वायु आदि सब शामिल है, के साथ देखने की है। यहाँ की उद्घोषणाओं में भारत की श्रेष्ठता के साथ साथ देश की सीमाओं से परे समस्त विश्व के कल्याण की प्रार्थनाएं और प्रयास शामिल हैं। यहाँ के दर्शन, राजनीति, कला, विज्ञान तथा चिंतन की अन्य विधाओं में विश्व कल्याण तथा मानव हित की मूल दृष्टि परिलक्षिति होती है।

मुख्य शब्द *: मानव कल्याण, भारतीय दर्शन, वैदिक दृष्टि, बौद्ध–जैन मत, वसुधैव कुटुम्बकम*

प्रस्तावना

भारत के दर्शन और चिंतन का मूल वेद हैं और वेदों की ऋचाएँ किसी देश या जाति की सीमा से बंधी न होकर संपूर्ण मानव जाति को सम्बोधित करती हैं। आज पश्चिम के देश भी मानने लगे हैं कि मनुष्य का अस्तित्व उसकी संपूर्ण पारिस्थितिकी और परिवेश से जुड़ा है (Deep Ecology)। समस्त वातावरण पर ध्यान दिए बिना मानव का कल्याण नहीं हो सकता। हजारों साल पहले वेदों में प्रकृति के तत्वों तथा जीव जंतुओं के प्रति सम्मान का भाव प्रदर्शित है– वेद प्रारम्भ ही अग्नि और वायु जैसे परम तत्त्वों के प्रति प्रार्थनाओं से हुए हैं। जैसे यजुर्वेद में ऋषि परम सत्ता से आकाश, ब्रह्मांड, भूमि, पादप, जीव, मनुष्य, जल आदि सभी में शांति की प्रार्थना करता है और ये प्रार्थनाएं किसी देश–काल की सीमा में न होकर संपूर्ण विश्व के लिए हैं। इस तरह वेदों में मानव कल्याण को उसके संपूर्ण अर्थ में व्याख्यायित किया गया है। मानव कल्याण को यदि मनुष्य के समाज के रूप में देखें तो भी वेदों की दृष्टि समन्वय की ही है। यहाँ ऋषि प्रार्थना केवल किसी देश –जाति को ध्यान में रखकर नहीं बल्कि संपूर्ण मानवता के लिए करता है– जैसे सभी के जीवन में सुख–शांति हो, पूर्णता और मंगलता हो, सभी के सुखी होने की, निरोगी होने की, सभी के कल्याण की प्रार्थना तभी होती है जब किसी के लिए मन में द्वेष आदि न हो, सीमाओं, जातियों तथा पंथों से जुडी संकीर्णता न हो। आगे चलकर उपनिषदों में

भी समस्त जनों के लिए प्रेम की अभिव्यक्ति परिलक्षित होती है। मेरे और तेरे के फेर से परे, सीमाओं के बंधन से दूर–उपनिषद् के ऋषि संपूर्ण सृष्टि को परिवार की तरह देखने की बात करते हैं। वसुधैव कुटुम्बकम के इस सिद्धांत को अगर वर्तमान के भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में देखें तो हमें पता चलता है हमारे ऋषियों की अवधारणाएं कितनी समृद्ध थीं। भूमंडलीकरण या वैश्वीकरण की कमियों को हम वसुधैव कुटुम्बकम के सिद्धांत से प्रेरणा लेकर दूर कर सकते हैं। ग्लोबलाइजेशन में मानव कल्याण को केवल भौतिक अर्थों में लिया गया है लेकिन मनुष्य जीवन को सिर्फ व्यवसाय के रूप में लेने से आपस में सिर्फ स्पर्धा हो सकती है परिवार जैसा प्रेम नहीं और प्रेम के बिना अगर ग्लोबल प्लेटफार्म बनेगा तो वह समस्याओं की जड़ होगा जैसा की आज के भूमण्डीकरण में हम देख रहे हैं।

गीता में भी समस्त लोक के कल्याण के लिए ही कर्मरत होने का परामर्श हमें मिलता है। कर्म जब किसी स्वार्थवश हो तब वह संकीर्ण होता है, व्यक्ति–देश –काल–जाति–पंथ से बंधा होता है। लेकिन जब कर्म निष्काम हो जाये तो वह सम्पूर्ण जगत के लिए हितकारी बन जाता है। कुरुक्षेत्र के मैदान में जब अर्जुन ने निष्काम कर्म का उपदेश सुना तो उनके मन में प्रश्न उठा कि 'यदि किसी कार्य से जुड़ा मेरा हित न हो तो वह कर्म क्यों किया जाये'? श्रीकृष्ण कहते हैं कि हमें समस्त कर्म निष्काम भाव से 'लोक संग्रह' के लिए, लोक कल्याण के लिए करना चाहिए। अन्य अर्थ में इसे यूँ कहें कि जब लोक हित को ध्यान में रखा जाय तो कर्म निष्कामता को प्राप्त होता है।

कालांतर में जब वैदिक रीति रिवाजों का, बिना उसका मूल अर्थ जाने, प्रयोग होने लगा और कुछ लोग धर्म के नाम पर आम लोगों का शोषण करने लगे, मनुष्य–मनुष्य में भेद करने लगे– ऐसे में मानव के कल्याण के लिए जैन और बौद्ध दर्शन आगे आये। पारलौकिक सत्ताओं के नाम पर मनुष्य का शोषण न हो, मनुष्य तथा संसार के सभी जीवों को जगत के कष्ट से मुक्ति मिले– यह सुनिश्चित करने के लिए इन दो दर्शनों ने ईश्वर पर चर्चा करना ही बंद कर दिया और मनुष्य के दुःख का कारण उसकी अपनी वृत्तियों को माना। विश्व के कल्याण में यदि ईश्वर या पारलौकिक जीवन का वर्णन बाधक बन जाये तो अच्छा है हम ईश्वर पर बात ही न करें और सारा ध्यान मनुष्य तथा समस्त जीवों के इहलौकिक कल्याण पर केंद्रित करें। लेकिन यहाँ भी कल्याण सिर्फ भौतिक अर्थों तक सीमित न होकर आतंरिक आनंद से युक्त जीवन जीने के अर्थ में लिया गया। जैन दर्शन ने चार कसायों– लोभ, मोह, क्रोध, और अभिमान को मनुष्य के बंधन का कारण माना। इन्हीं कसायों के कारण शुद्ध आत्मा कर्मों का आस्रव करती है और शरीरवान होती है। त्रिरत्नों के पालन से हम जगत के दुःखों से मुक्त हो सकते हैं।

शाक्य मुनि गौतम बुद्ध ने मनुष्य को जीवन के दुखों से मुक्ति दिलाने के लिए ही घर–परिवार छोड़ा, राजसिक सुख छोड़ा। उन्हें भी लगा की आत्मा और परमात्मा की अत्यधिक चर्चा मनुष्य को वर्तमान में जीने नहीं देती, वह हमेशा पारलौकिक जगत में रहता है। साथ ही जगत तथा इसकी बस्तुओं से मोह एवं तृष्णा इस संसार में दुःख का कारण है। इन्द्रिय सुख के लालसा से भरा मनुष्य जिस तरह से जीवन जीता है, सम्मोहित हो जाता है– ऐसी तृष्णा मनुष्य

को कल्याणकारी जीवन नहीं दे सकती। बुद्ध ने अपने प्रवचनों में जीवन के इसी सत्य की और संकेत किया। वह कहते हैं की जब कोई व्यक्ति विष से युक्त तीर से घायल हो गया हो तो हमारा पहला प्रयास उसकी चोट को, दुःख को दूर करने का होना चाहिए न कि ऐसे प्रश्न पूछने का की 'यह तीर किसने मारा?, किस दिशा से आया?, जिस व्यक्ति ने इसे मारा वह किस जाति का था?, वह बाह्मण था, शूद्र था या वैश्य? बुद्ध कहते हैं कि ऐसे प्रश्न उस मनुष्य के दुःख को दूर नहीं कर सकते। ऐसी स्थिति में हमारे लिए यह जानना ही काफी होगा की उस दुःख का कारण क्या है और हम उसे कैसे दूर कर सकते हैं? बुद्ध ने कहा कि मनुष्य के जीवन का कल्याण उसके अपने कर्म तथा नैतिकता के पथ का पालन करने से ही हो सकता है। बुद्ध के चार ब्रह्मविहार– करुणा, मुदिता, मैत्री एवं उपेक्षा– मनुष्य को विश्व कल्याण के लिए प्रेरित करने के उपदेश ही हैं।

धर्मशास्त्रों ने जगत के कल्याण के लिए मनुष्य जीवन के लक्ष्य निर्धारित किये जिनको पुरुषार्थ कहा गया। एक सामान्य मनुष्य इन चार पुरुषार्थों–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में सामंजस्य करके ही अपना एवं समाज का जीवन सुखी बना सकता है। वर्तमान युग के परिप्रेक्ष्य में, जब हम आर्थिक मूल्यों एवं भौतिक इन्द्रिय सुख को मानव कल्याण की अंतिम कसौटी समझने लगे हैं, इन मूल्यों की महत्ता और बढ़ जाती है। यहाँ धर्म का तात्पर्य किसी रिलिजन से न होकर उन नैतिक मूल्यों से है जो मनुष्य जीवन की आधार शिला हैं। केवल तर्कशील होना ही मनुष्य की परिभाषा नहीं हो सकती बल्कि धर्म के अंतर्गत जितने मूल्यों का वर्णन किया गया है उन्ही की उपस्थिति के कारण मनुष्य में मानवता आती है। धर्म का सिद्धांत भारत में विकसित होकर भी किसी जाति या देश की सीमा में बंधा नहीं है। धर्म रिलिजन की तरह किसी पारलौकिक सत्ता और आस्था पर केंद्रित न होकर एक गहरी समझ के साथ संपूर्ण मानव जाति को जीवन के हर क्षेत्र में एक नैतिक आयाम देने का आधार है। भारत के हर पंथ ने इसी धर्म का प्रचार प्रसार किया जिसके कि मूल में समस्त मानवता का कल्याण निहित था। जब हमारे जीवन का आर्थिक व्यवहार (अर्थ) तथा भौतिक सुख समृद्धि की चाह (काम) धर्म से संचालित होगा तो हम और अधिक कल्याणकारी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

भारत में दर्शन का विकास सिर्फ मानसिक कौतूहल को शांत करने का माध्यम नहीं रहा, यह पश्चिम के देशों की फिलॉसफी की तरह केवल सत्य की परिभाषा और उसको जानने की विधि तक सीमित नहीं रहा। दर्शन का उद्देश्य न केवल सत्य से साक्षात्कार कराना था बल्कि उसी के अनुरूप मानव जीवन को श्रेष्ठतर आयाम प्रदान कराना भी था। हम जैसा जीवन जीते हैं, दर्शन की दृष्टि में वह पर्याप्त नहीं है। ऐसी जीवन शैली से हम अपनी संभावनाओं को गुणात्मक रूप से निचले स्तर तक ही अभिव्यक्त कर सकते हैं। दर्शन का उद्देश्य मनुष्य को उसके तथा जगत के वास्तविक स्वरुप से साक्षात्कार करके जीवन को आनंदमय बनाना है। भारत के सभी दर्शनों ने अपने अपने माध्यम से मानव कल्याण को उच्चतर सोपान प्रदान करने का प्रयास किया है। हम सिर्फ पाशविक वृत्तियों की पूर्ति को ही मानव कल्याण न समझें बल्कि सच्चे अर्थ में मानव जीवन का साक्षात्कार हो–ऐसा उद्देश्य दर्शन का रहा है। ऐसा प्रयास सांख्य– योग दर्शन ने राज

योग के माध्यम से तो न्याय–वैशेषिक ने तत्त्व ज्ञान तथा तर्क के माध्यम से किया। पतंजलि का अष्टांगिक योग मार्ग मानव चेतना को उच्चतम स्तर पर ले जाने का मार्ग है।

मानव जाति को वेदांत दर्शन ने भक्ति (वैष्णव) और ज्ञान (अद्वैत) के माध्यम से कल्याणकारी जीवन प्रदान किया है। आज की तनाव भरे जीवन शैली में वैष्णवों द्वारा बताई गयी भक्ति एक बड़ा सहारा सिद्ध हो सकती है। अद्वैत संभवतः भारत के द्वारा दिया गया विश्व के कल्याण का सबसे बड़ा कारगर विचार है। समस्त जीवों, मनुष्यों एवं प्रकृति में अभेद स्थापित करने की घोषणा केवल भाषायी स्तर पर न होकर हमारे मन–बुद्धि को बदलने बाली है। अद्वैत व्यावहारिक स्तर पर विविधताओं को स्वीकार करते हुए, सम्मान देते हुए यह स्थापित करता है की जगत में कोई व्यक्ति या तत्त्व पारमार्थिक रूप से किसी दूसरे व्यक्ति या तत्त्व से भिन्न नहीं है। अद्वैत के इस विचार को आज के आधुनिक विज्ञानं (Quantum Physics) ने प्रामाणिक रूप से सिद्ध भी किया है। मानव के शोषण तथा असमानता के आंदोलनों को अद्वैत एक नया आयाम प्रदान करता है। हम जैसा सोचते हैं उसी के अनुसार व्यवहार करते हैं– अद्वैत हमारी सोच को समानता की और ले जाता है, प्रकृति से जोड़ता है, देश–पंथ की सीमा से परे ले जाता है। मानव समानता स्थापित करने का संभवतः यह सबसे बड़ा योगदान है। स्वामी विवेकानंद ने आगे चलकर इस अद्वैत को दैनिक जीवन में उतारने पर बल दिया। उनकी चिंता थी की कहीं यह दर्शन बौद्धिकं चर्चा का विषय बनकर न रह जाये– इसको व्यवहार में उतारना होगा तब यह मानव एकता का दर्शन बन कर उभरेगा।

ऐसा नहीं है की भारत में मानव कल्याण को केवल दार्शनिक स्तर सोचा गया हो, यहाँ कई विचारकों एवं राजाओं ने मानव कल्याण को अपना मुख्य उद्देश्य बनाया। राजव्यवस्था के माध्यम से मानव हित को साधने में चाणक्य का विशेष योगदान है, उनका अर्थशास्त्र राजा–प्रजा संबंधों का एक विशद साहित्य है। कौटिल्य के अनुसार प्रजा के सुख में ही राजा का सुख है, जो प्रजा के लिए लाभकर है वह ही राजा के लिए लाभकर होना चाहिए। कलिंग विजय के बाद सम्राट अशोक ने धर्म का जीवन अपना कर प्रजा के हित के लिए जीवन समर्पित किया। कलिंग विजय के पश्चात उनके शिलालेखों में उनकी मानवीयता परिलक्षित होती है। उदाहरण के लिए अपने १३ वे शिलालेख (सच्ची विजय) में वह लिखवाते हैं...'' राजाधिराज को कलिंग पर आक्रमण का अत्यंत पछतावा है, दुःख और वेदना का आभास है... अब राजाधिराज चाहते हैं की सभी जीवों को सुरक्षा, स्वनियंत्रण, मन की शांति और प्रसन्नता अवश्य मिलनी चाहिए। मेरे पुत्र या पौत्र आधिपत्य या आक्रमण को अपना कर्तव्य न समझे.... उन्हें समझना चाहिए की सच्ची विजय दया और करुणा से ही प्राप्त की जा सकती है।'' मानव जाति के इतिहास में अशोक जैसे किसी अन्य राजा का और उदाहरण नहीं है जिसने कोई युद्ध जीतने के बाद पश्चाताप दिखाया हो और नैतिकता का मार्ग अपना लिया हो। अषोक ने अपने पुत्र और पुत्री को श्रीलंका किसी आक्रमण के लिए नहीं बल्कि मानवीय धर्म के प्रसार के लिए भेजा। मानव कल्याण की इससे बड़ी व्यावहारिक अभिव्यक्ति और क्या हो सकती है।

आधुनिक समय में स्वामी विवेकानंद ने भारत की इसी उदारता की भावना को, मानव कल्याण के उद्देश्य को पुरे विश्व में प्रसारित किया। शिकागो के धर्म सम्मलेन में अपने सम्बोधन के प्रारम्भ में उनके द्वारा कहा गया "Sisters and Brothers of America.." अनायास नहीं था बल्कि वह संपूर्ण भारतीय संस्कृति का सार था। शिकागो धर्म सम्मलेन के प्रथम उद्बोधन में ही वह कहते हैं की.. "मुझे अपने राष्ट्र पर गर्व है जिसने अन्य धर्मों तथा देशों के सताए हुए लोगों को शरण दी है"। आधुनिक भारत के अन्य विचारकों में भी मानव कल्याण की भावना प्रदर्शित होती है.. चाहे गाँधी हों या अम्बेडकर, सभी ने अपने विचारों एवं कार्यों में मानव कल्याण को प्रमुखता दी है जोकि भारत की मूल भावना की अभिव्यक्ति हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय चिंतन के मूल में मानव कल्याण, विश्व कल्याण ही निहित है। ईश्वर या पारलौकिक जीवन यहाँ के चिंतन के केंद्र में कभी नहीं रहा। यहाँ का दर्शन मानव को उसके समस्त परिवेश के साथ कल्याणकारी जीवन देने के लिए प्रयासरत रहा। यद्यपि भारत में मानव कल्याण से तात्पर्य पश्चिम की तरह संकीर्ण अर्थों में भौतिक, ऐन्द्रिय, तथा बौद्धिक सुख तक सीमित न रहकर मनुष्य की संपूर्ण संभावनाओं के विकास से है। पश्चिम भारत के इस कल्याण के उच्च आदर्श को नहीं समझ सका और भारत के प्रयासों को पारलौकिक करार दे दिया।

हालाँकि ऐसा नहीं है कि समस्त मानव जाति के कल्याण का दर्शन रखने वाले भारत में सब कुछ अच्छा ही हुआ हो, हमसे व्यवहार में कई भूलें हुईं और उनके कारण हमें लम्बी गुलामी के दिन भी देखने पड़े। समस्त विश्व को परिवार की तरह देखने का दर्शन रखने के बाद भी हम अपने ही राष्ट्र के लोगों से समानता का व्यवहार न कर सके। जातिवाद और क्षेत्रवाद ने काफी हद तक मानव कल्याण में बाधा पहुंचाई है। लेकिन इन भूलों में सुधार के लिए हमें प्रेरणा भी हमारे राष्ट्र का दर्शन प्रदान करता है और करता रहेगा।

REFERENCES

1 Ralph T- H- Griffith& Arthur Berriedale Keith (Trans.), Jon William Fergus (Compiler) (2017), The Vedas: The Samhitas of the Rig, Yajur, Createspace Independent Pub.

2 AC Bhaktivedanta Svami, AC Prabhupada, (2001), Bhagvad Gita as it is, Bhaktivedanta Book Trust.

3 Gambirananda, Swami (Trans.), (2002), TaittariyaUpanishad, Advaita Ashram, Kolkata.

4 Baba, Bangali, (2010), Yogasûtra Patanjali with the commentary of Vyâsa, M.B.D.

5 Nikam, M.A. & McKeon Richard Peter, (1966), The Edicts of Ashoka, The Phoenix Books, University of Chicago Press

6 Complete works of Swami Vivekananda, (2008), Advaita Ashrama. Kolkata

शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com/* https://doi.org/10.31995/shodhmanthan

7 Rao, K. Ramakrishna (1998), "Two Faces of Consciousness. A Look at Eastern and Western Perspectives," Journal of Consciousness Studies, Vol- 5, No 3

8 Phillips, Stephen H. (1997), Classical Indian Metaphysics, New Delhi: Motilal Banarsidas

9 Radhakrishnan, S., (2008), Indian Philosophy, Vol. I, II, Oxord

10 Walpola Rahula, (2007) "What the Buddha Taught: Revised and Expanded Edition with Texts from Suttas and Dhammapada" (Grove Press,) Kindle Edition, Chapter 1